© INNOVATIVE RESEARCH THOUGHTS | Refereed | Peer Reviewed | Indexed
ISSN : 2454 – 308X | Volume : 03 , Issue : 09 | October – December 2017

प्रागैतिहासिक काल के बारे में सम्पूर्ण जानकारी और एक विवेचना

Sumit Kumar Singh, Assistant Teacher
Upgraded Middle School Kunwar ,Rajnagar Madhubani Bihar

सार

प्रागैतिहासिक इतिहास के उस काल को कहा जाता है जब मानव तो अस्तित्व में थे लेकिन जब लिखाई का आविष्कार न होने से उस काल का कोई लिखित वर्णन नहीं है। इस काल में मानव-इतिहास की कई महत्वपूर्ण घटनाएँ हुई जिनमें हिमयुग, मानवों का अफ़्रीका से निकलकर अन्य स्थानों में विस्तार, आग पर स्वामित्व पाना, कृषि का आविष्कार, कुत्तों व अन्य जानवरों का पालतू बनना इत्यादि शामिल हैं। ऐसी चीज़ों के केवल चिह्न ही मिलते हैं, जैसे कि पत्थरों के प्राचीन औज़ार, पुराने मानव पड़ावों का अवशेष और गुफाओं की कला। पहिये का आविष्कार भी इस काल में हो चुका था जो प्रथम वैज्ञानिक आविष्कार था प्रागैतिहासिक काल में मानवों का वातावरण बहुत भिन्न था। अक्सर मानव छोटे क़बीलों में रहते थे और उन्हें जंगली जानवरों से जूझते हुए शिकारी-फ़रमर जीवन व्यतीत करना पड़ता था। विश्व की अधिकतर जगहें अपनी प्राकृतिक स्थिति में थीं। ऐसे कई जानवर थे जो आधुनिक दुनिया में नहीं मिलते, जैसे कि मैमथ और बालदार गैंडा। विश्व के कुछ हिस्सों में आधुनिक मानवों से अलग भी कुछ मानव जातियाँ थीं जो अब विलुप्त हो चुकी हैं, जैसे कि यूरोप और मध्य एशिया में रहने वाले निअंडरथल मानव। भारतीयों-समेत सभी ग़ैर-अफ़्रीकी मानव कुछ हद तक इन्ही निअंडरथलों की संतान हैं, यानि आधुनिक मानवों और निअंडरथलों ने आपस में बच्चे पैदा किये थे

मुख्य शब्द : प्रागैतिहासिक ,इतिहास, शिकारी, वैज्ञानिक आविष्कार आदि।

प्रस्तावना

इस काल में मनुष्य ने घटनाओं का कोई लिखित विवरण नहीं रखा। इस काल में विषय में जो भी जानकारी मिलती है वह पाषाण के उपकरणों, मिट्टी के बर्तनों, खिलौने आदि से प्राप्त होती है। इस काल में लेखन कला के प्रचलन के बाद भी उपलब्ध लेख पढ़े नहीं जा सके हैं।

ऐतिहासिक काल

मानव विकास के उस काल को इतिहास कहा जाता है, जिसके लिए लिखित विवरण उपलब्ध है। मनुष्य की कहानी आज से लगभग दस लाख वर्ष पूर्व प्रारम्भ होती है, पर 'ज्ञानी मानव' होमो सैपियंस Homo sapiens का प्रवेश इस धरती पर आज से क़रीब तीस या चालीस हज़ार वर्ष पहले ही हुआ।

पाषाण काल

यह काल मनुष्य की सभ्यता का प्रारम्भिक काल माना जाता है। इस काल को तीन भागों में विभाजित किया जा सकता है। :–

पुरापाषाण काल

यूनानी भाषा में Palaios प्राचीन एवं Lithos पाषाण के अर्थ में प्रयुक्त होता था। इन्हीं शब्दों के आधार पर Paleolithic Age (पाषाणकाल) शब्द बना ।

यह काल आखेटक एवं खाद्य-संग्रहण काल के रूप में भी जाना जाता है। अभी तक भारत में पुरा पाषाणकालीन मनुष्य के अवशेष कहीं से भी नहीं मिल पाये हैं, जो कुछ भी अवशेष के रूप में मिला है, वह है उस समय प्रयोग में लाये जाने वाले पत्थर के उपकरण।

प्राप्त उपकरणों के आधार पर यह अनुमान लगाया जा रहा है कि ये लगभग 2,50,000 ई.पू. के होंगे।

अभी हाल में महाराष्ट्र के 'बोरी' नामक स्थान खुदाई में मिले अवशेषों से ऐसा अनुमान लगाया जा रहा है कि इस पृथ्वी पर 'मनुष्य' की उपस्थिति लगभग 14 लाख वर्ष पुरानी है। गोल पत्थरों से बनाये गये प्रस्तर उपकरण मुख्य रूप से सोहन नदी घाटी में मिलते हैं।

सामान्य पत्थरों के कोर तथा फ़्लॅक्स प्रणाली द्वारा बनाये गये औजार मुख्य रूप से मद्रास, वर्तमान चेन्नई में पाये गये हैं। इन दोनों प्रणालियों से निर्मित प्रस्तर के औजार सिंगरौली घाटी, मिर्ज़ापुर एंवं बेलन घाटी, इलाहाबाद में मिले हैं।

मध्य प्रदेश के भोपाल नगर के पास भीम बेटका में मिली पर्वत गुफायें एवं शैलाश्रृय भी महत्त्वपूर्ण हैं। इस समय के मनुष्यों का जीवन पूर्णरूप से शिकार पर निर्भर था।

मध्य पाषाण काल

इस काल में प्रयुक्त होने वाले उपकरण आकार में बहुत छोटे होते थे, जिन्हें लघु पाषाणोपकरण माइक्रोलिथ कहते थे। पुरापाषाण काल में प्रयुक्त होने वाले कच्चे पदार्थ क्वार्टजाइट के स्थान पर मध्य पाषाण काल में जेस्पर, एगेट, चर्ट और चालसिडनी जैसे पदार्थ प्रयुक्त किये गये। इस समय के प्रस्तर उपकरण राजस्थान, मालवा, गुजरात, पश्चिम बंगाल, उड़ीसा, आंध्र प्रदेश एवं मैसूर में पाये गये हैं। अभी हाल में ही कुछ अवशेष मिर्जापुर के सिंगरौली, बांदा एवं विन्ध्य क्षेत्र से भी प्राप्त हुए हैं।

मध्य पाषाणकालीन मानव अस्थि-पंजर के कुछ अवशेष प्रतापगढ़, उत्तर प्रदेश के सराय नाहर राय तथा महदहा नामक स्थान से प्राप्त हुए हैं। मध्य पाषाणकालीन जीवन भी शिकार पर अधिक निर्भर था। इस समय तक लोग पशुओं में गाय, बैल, भेड़, घोड़े एवं भैंसों का शिकार करने लगे थे।

जीवित व्यक्ति के अपरिवर्तित जैविक गुणसूत्रों के प्रमाणों के आधार पर भारत में मानव का सबसे पहला प्रमाण केरल से मिला है जो सत्तर हज़ार साल पुराना होने की संभावना है। इस व्यक्ति के गुणसूत्र अफ़्रीक़ा के प्राचीन मानव के जैविक गुणसूत्रों (जीन्स) से पूरी तरह मिलते हैं।

यह काल वह है जब अफ़्रीक़ा से आदि मानव ने विश्व के अनेक हिस्सों में बसना प्रारम्भ किया जो पचास से सत्तर हज़ार साल पहले का माना जाता है। कृषि संबंधी प्रथम साक्ष्य 'साम्भर' राजस्थान में पौधे बोने का है जो ईसा से सात हज़ार वर्ष पुराना है।

3000 ई. पूर्व तथा 1500 ई. पूर्व के बीच सिंधु घाटी में एक उन्नत सभ्यता वर्तमान थी, जिसके अवशेष मोहन जोदड़ो (मुअन-जो-दाड़ो) और हड़प्पा में मिले हैं। विश्वास किया जाता है कि भारत में आर्यों का प्रवेश बाद में हुआ। वेदों में हमें उस काल की सभ्यता की एक झाँकी मिलती है।

मध्य पाषाण काल के अन्तिम चरण में कुछ साक्ष्यों के आधार पर प्रतीत होता है कि लोग कृषि एवं पशुपालन की ओर आकर्षित हो रहे थे इस समय मिली समाधियों से स्पष्ट होता है कि लोग अन्त्येष्टि क्रिया से परिचित थे। मानव अस्थिपंजर के साथ कहीं-कहीं पर कुत्ते के अस्थिपंजर भी मिले है जिनसे प्रतीत होता है कि ये लोग मनुष्य के प्राचीन काल से ही सहचर थे।

नव पाषाण अथवा उत्तर पाषाण काल

साधरणतया इस काल की सीमा 3500 ई.पू. से 1000 ई.पू. के बीच मानी जाती है। यूनानी भाषा का Neo शब्द नवीन के अर्थ में प्रयुक्त होता है। इसलिए इस काल को 'नवपाषाण काल' भी कहा जाता है।

इस काल की सभ्यता भारत के विशाल क्षेत्र में फैली हुई थी। सर्वप्रथम 1860 ई. में 'ली मेसुरियर' Le Mesurier ने इस काल का प्रथम प्रस्तर उपकरण उत्तर प्रदेश की टौंस नदी की घाटी से प्राप्त किया।

इसके बाद 1872 ई. में 'निबलियन फ़्रेज़र' ने कर्नाटक के 'बेलारी' क्षेत्र को दक्षिण भारत के उत्तर-पाषाण कालीन सभ्यता का मुख्य स्थल घोषित किया।

इसके अतिरिक्त इस सभ्यता के मुख्य केन्द्र बिन्दु हैं – कश्मीर, सिंध प्रदेश, बिहार, झारखंड, बंगाल, उत्तर प्रदेश, आंध्र प्रदेश, छत्तीसगढ़, असम आदि।

ताम्र-पाषाणिक काल

जिस काल में मनुष्य ने पत्थर और तांबे के औज़ारों का साथ-साथ प्रयोग किया, उस काल को 'ताम्र-पाषाणिक काल' कहते हैं। सर्वप्रथम जिस धातु को औज़ारों में प्रयुक्त किया गया वह थी – 'तांबा'।

ऐसा माना जाता है कि तांबे का सर्वप्रथम प्रयोग क़रीब 5000 ई.पू. में किया गया। भारत में ताम्र पाषाण अवस्था के मुख्य क्षेत्र दक्षिण-पूर्वी राजस्थान, मध्य प्रदेश के पश्चिमी भाग, पश्चिमी महाराष्ट्र तथा दक्षिण-पूर्वी भारत में हैं।

दक्षिण-पूर्वी राजस्थान में स्थित 'बनास घाटी' के सूखे क्षेत्रों में 'अहाड़ा' एवं 'गिलुंड' नामक स्थानों की खुदाई की गयी। मालवा, एवं 'एरण' स्थानों पर भी खुदाई का कार्य सम्पन्न हुआ जो पश्चिमी मध्य प्रदेश में स्थित है। खुदाई में मालवा से प्राप्त होनेवाले 'मृद्भांड' ताम्रपाषाण काल की खुदाई से प्राप्त अन्य मृद्भांडों में सर्वोत्तम माने गये हैं।

पश्चिमी महाराष्ट्र में हुए व्यापक उत्खनन क्षेत्रों में अहमदनगर के जोर्वे, नेवासा एवं दायमाबाद, पुणे ज़िले में सोनगांव, इनामगांव आदि क्षेत्र सम्मिलित हैं। ये सभी क्षेत्र 'जोर्वे संस्कृति' के अन्तर्गत आते हैं। इस संस्कृति का समय 1,400-700 ई.पू. के क़रीब माना जाता है। वैसे तो यह सभ्यता ग्रामीण भी पर कुछ भागों जैसे 'दायमाबाद' एवं 'इनामगांव' में नगरीकरण की प्रक्रिया प्रारम्भ हो गयी थी।

'बनासघाटी' में स्थित 'अहाड़' में सपाट कुल्हाड़ियां, चूड़ियां और कई तरह की चादरें प्राप्त हुई हैं। ये सब तांबे से निर्मित उपकरण थे। 'अहाड़' अथवा 'ताम्बवली' के लोग पहले से ही धातुओं के विषय में जानकारी रखते थे।

अहाड़ संस्कृति की समय सीमा 2,100 से 1,500 ई.पू. के मध्य मानी जाती है। 'गिलुन्डु', जहां पर एक प्रस्तर फलक उद्योग के अवशेष मिले हैं, 'अहाड़ संस्कृति' का केन्द्र बिन्दु माना जाता है।

इस काल में लोग गेहूँ, धान और दाल की खेती करते थे। पशुओं में ये गाय, भैंस, भेड़, बकरी, सूअर और ऊँट पालते थे। 'जोर्वे संस्कृति' के अन्तर्गत एक पांच कमरों वाले मकान का अवशेष मिला है। जीवन सामान्यतः ग्रामीण था। चाक निर्मित लाल और काले रंग के 'मृद्भांड' पाये गये हैं। कुछ बर्तन, जैसे 'साधारण तश्तरियां' एवं 'साधारण कटोरे' महाराष्ट्र और मध्य प्रदेश में 'सूत एवं रेशम के धागे' तथा 'कायथा' में मिले 'मनके के हार' के आधार पर कहा जा एकता है कि 'ताम्र-पाषाण काल' में लोग कताई-बुनाई एवं सोनारी व्यवसाय से परिचित थे।

इस समय शवों के संस्कार में घर के भीतर ही शवों का दफ़ना दिया जाता था। दक्षिण भारत में प्राप्त शवों के शीश पूर्व और पैर पश्चिम की ओर एवं महाराष्ट्र में प्राप्त शवों के शीश उत्तर की ओर एवं पैर दक्षिण की ओर मिले हैं। पश्चिमी भारत में लगभग सम्पूर्ण शवाधान एवं पूर्वी भारत में आंशिक शवाधान का प्रचलन था।

इस काल के लोग लेखन कला से अनभिज्ञ थे। राजस्थान और मालवा में प्राप्त मिट्टी निर्मित वृषभ की मूर्ति एवं 'इनाम गांव से प्राप्त 'मातृदेवी की मूर्ति' से लगता है कि लोग वृषभ एवं मातृदेवी की पूजा करते थे। तिथि क्रम के अनुसार भारत में ताम्र-पाषाण बस्तियों की अनेक शाखायें हैं। कुछ तो 'प्राक् हड़प्पायी' हैं, कुछ हड़प्पा संस्कृति के समकालीन हैं, कुछ और हड़प्पोत्तर काल की हैं।

'प्राक् हड़प्पा कालीन संस्कृति' के अन्तर्गत राजस्थान के 'कालीबंगा' एवं हरियाणा के 'बनवाली' स्पष्टतः ताम्र-पाषाणिक अवस्था के हैं। 1,200 ई.पू. के लगभग 'ताम्र-पाषाणिक संस्कृति' का लोप हो गया। केवल 'जोर्वे संस्कृति' ही 700 ई.पू. तक बची रह सकी। सर्वप्रथम चित्रित भांडों के अवशेष 'ताम्र-पाषाणिक काल' में ही मिलते हैं। इसी काल के लोगों ने सर्वप्रथम भारतीय प्राय:द्वीप में बड़े बड़े गांवों की स्थापना की।

उपसहार :

इस युग की अवधि के समय से शिकारी और किसान वर्ष 3000 ई. पू. में नीदरलैंड के इतिहास शामिल हैं। शिकारी और किसान के समय भी प्रागितिहास कहा जाता है। प्रागितिहास के लिए इतिहास का मतलब है। इस अवधि से हम कोई सूत्रों का लिखा है। सब हम जानते हैं हम पुरातत्व ढूँढता है करने के लिए धन्यवाद पता है कि प्रागैतिहासिक काल का है। ये आम तौर पर उस अवधि से लोगों द्वारा किए गए आइटम्स हैं। हम इस कलाकृतियों कहते हैं। लेकिन कभी कभी भी पुरातत्वविदों जानवरों या प्रागैतिहासिक काल से लोगों के अवशेष मिल। पहाड़ पर चढ़नेवाला इस का एक उदाहरण है। इन पाता का अध्ययन करके वे निर्धारित कर सकते हैं जो समय से वे उन्हें इतिहास और जनजातियों के बारे में बहुमूल्य जानकारी प्राप्त करें। प्रागितिहास तीन विभिन्न epochs में विभाजित है। ये हैं: पाषाण युग, कांस्य युग और कलियुग। प्रागितिहास, पाषाण युग के पहले की अवधि भी तीन विभिन्न epochs में विभाजित है। ये हैं: पुराने पाषाण युग (पुरापाषाण काल), मध्य पाषाण युग (मध्यपाषाण काल) और एक नया स्टोन आयु (निओलिथिक)।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

[1] अर्थशास्त्र: (कौटिल्यकृत), हिन्दी व्याख्या वाचस्पति गैरोला, चैखम्बा विद्याभवन, वाराणसी, चतुर्थ सं. 2003

[2] अथर्ववेद: सातलवेकर स्वाध्यायमण्डल, पारडी, 1957 दयानन्द संस्थान, नई दिल्ली, 1912

[3] अपराजितपृच्छा: (भुवनदेवकृत) सं. पोपटभाई अम्बाशंकर मनकड, गायकवाड़ ओरियण्टल सिरीज, खण्ड 115, बड़ौदा, 1950

[4] अभिधान चिन्तामणि: (हेमचन्द्रकृत), सम्पा. हरगोविन्ददास बेचरदास तथा मुनिजिनविजय, भावनगर, भाग 1, 1914, भाग 2, 1919

[5] अमरकोश: अमर सिंह, चैखम्भा संस्कृत सिरीज, 1970

[6] अष्टाध्यायी: (पाणिनिकृत) गुरु प्रसाद शास्त्री, वाराणसी, 1941

[7] अहिर्बुध्न्य संहिता: (पाञ्चरात्रागम, दो भाग) द्वितीय संस्करण, सम्पा. एम.डी. रामानुजाचार्य, अड्यार लाइब्रेरी एण्ड रिसर्च सेन्टर, मद्रास, 1986